|| श्रीहरिः ||

वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |

देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 8: अक्षरब्रह्मयोग

3/3 (श्लोक 19-28), शनिवार, 15 जुलाई 2023

विवेचक: गीता विशारद डॉ. संजय जी मालपाणी

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/JPifeJXmkv8

परमपद की प्राप्ति का मार्ग

परमपिता परमेश्वर की प्रार्थना, दीप प्रज्वलन एवम् गुरु वन्दना के साथ आज के सत्र का शुभारम्भ हुआ। गुरु के मार्गदर्शन के बिना हम सही पथ पर चल कर अपने गन्तव्य तक पहुँच जाये ये असम्भव है। आदि गुरु महादेव से लेकर जगद्गुरु आदि शंकराचार्य, भगवान श्रीकृष्ण और अनेक गुरुओं की परम्परा अविरल धारा के रूप में सनातन काल से हम लोगों के देश में बह रही है।

ये कल कल छल छल बहती क्या कहती गङ्गा धारा,

युग युग से बहता आया ये पुण्य प्रवाह हमारा।

इस अध्याय में अर्जुन ने श्रीभगवान् से आठ प्रश्न पूछे। अर्जुन ने पूछा कि ब्रह्म क्या है? अध्यात्म क्या है? कर्म क्या है? अधिभूत क्या है? अधिदैव क्या है? अधियज्ञ क्या है? वह इस देह में कैसे रहता है? अन्तिम समय में मनुष्य आपको कैसे प्राप्त कर सकता है? इन आठों प्रश्नों के उत्तर भगवान ने अत्यन्त सरलता से एक - एक शब्द में दिए। ब्रह्म क्या है -परम अक्षर अध्यात्म - स्वभाव कर्म - प्राणियों के उद्भव के लिए करने वाला त्याग अधिभूत - नश्वर पदार्थ अधिदैव - ब्रह्मा जी अधियज्ञ / देह के अन्दर - इस देह के अन्दर अन्तर्यामी के रुप में मैं रहता हूँ यदि स्वभाव वश बहुत देर तक बैठ कर पूजा नहीं कर पाते तो पढ़ना चाहिए और उसे अपने जीवन में अपनाना चाहिए। अतः कर्म स्वभाव बन जाता है। यदि कर्म सबके हित के लिए होता है, तो उसे त्याग कहते हैं। त्यागरूप कर्म अर्थात अकर्म यदि स्वभाव बन जाता है तो वही अध्यात्म है। अन्तिम समय में मनुष्य जब मेरा ध्यान करके देह का त्याग करता है तो वह मेरे स्वरूप में ही समा जाता है। अन्तिम समय में मैं ध्यान में रहूँ इसके लिए निरन्तर मेरा ध्यान रखना होगा तभी मैं अन्तिम समय में याद आऊंगा।अध्यापक बच्चों को पढ़ाते हैं, उसके बदले उन्हें पारिश्रमिक मिलता है। पर यदि अध्यापक बच्चों को अच्छे से पढ़ाने के साथ साथ उनके अन्दर अच्छे संस्कारों का बीजारोपण भी करें तो ये उनका अकर्म बन जायेगा। घर में भोजन ईश्वर का स्मरण करते हुए बनाने से वह भोग बन जाता है। यह भी पूजा ही है। ईश्वर का ध्यान करते हुए कर्म करने से वह अकर्म बन जाता है। बारहवें अध्याय में भगवान कहते है कि, यदि जप करना सम्भव नहीं है, तो मेरे लिए काम करना आरम्भ कर दो और कर्मफल का भी त्याग कर दो।

भगवान कहते है की इस प्रकार योग का जो नित्य अभ्यास करता है उसका चित्त कही भी नहीं भटकता और वह मुझे ही प्राप्त होता है। श्रीभगवान् योग की परिभाषा बताते है **योगः कर्मसु कौशलम्** मेरा सारा कर्म कौशल के साथ करना भी योग है। जीवन भर कौशल के साथ कर्म करते हुए, उसे मुझे अर्पण करते हुए फल की अपेक्षा ना करते हुए जो कर्म करेगा उसे अन्तिम समय भी वही याद आएगा और वह सद्गति को प्राप्त होगा। भगवान बताते है कि प्रयाण काल में क्या करना चाहिये।

प्रयाणकाले मनसाचलेनभक्त्या युक्तो योगबलेन चैव।

मानस को अचल बनाने के लिए मन और बुद्धि दोनों समर्पित होने चाहिये। अन्यथा वह चञ्चल ही रहेगा। बुद्धि और मन जब दोनों एक साथ जुड़कर काम करेंगे तभी मानस अचल बनेगा। प्रयाण काल में ये अचल रहे इसके लिए निरन्तर जीवन भर अभ्यास करना चाहिये। दोनों भृकुटियों के मध्य से जो प्राण का त्याग करेगा वह परम गति को प्राप्त होगा। इसमें कोई संशय नहीं है, पर इसे श्रद्धा और विश्वास के साथ करना चाहिये। सम्पूर्ण शरीर के नौ द्वारों का संयमन करने का अभ्यास करना चाहिये तभी यह होगा। अन्तिम समय में शरीर के अन्दर ॐ का उच्चारण करने से परमगति की प्राप्ति होती है।

8.19

भूतग्रामः(स्) स एवायं(म्), भूत्वा भूत्वा प्रलीयते ।
रात्र्यागमेऽवशः(फ्) पार्थ, प्रभवत्यहरागमे ॥ 8.19॥

हे पार्थ! वही यह प्राणी समुदाय उत्पन्न हो- होकर प्रकृति के परवश हुआ ब्रह्मा के दिन के समय उत्पन्न होता है (और) ब्रह्मा की रात्रि के समय लीन होता है।

विवेचन - श्रीभगवान् कहते है कि हे पार्थ! समस्त प्राणी समुदाय उत्पन्न हो होकर प्रकृति के वश में होता हुआ ब्रह्मा के दिन के समय उत्पन्न होता है, और ब्रह्मा की रात्रि में लीन होता है। कभी व्यक्त होता है तो कभी अव्यक्त होता है। जो दिखाई ना दे पर हो, उसे अव्यक्त कहते हैं। जैसे जब शरीर से प्राण निकलता है तो वह दिखायी नहीं देता पर वह होता है। जैसे बिजली भी दिखती नहीं है पर वह बल्ब के माध्यम से प्रकाश फैलाती है। हमारे चारों तरफ जो नेटवर्क का जाल बिछा हुआ है वह भी अव्यक्त है अर्थात हमें दिखाई नहीं देता, पर जब वह चला जाता है तो हमारे फ़ोन, लैपटॉप काम करना बन्द कर देते हैं। इसी प्रकार ये अव्यक्त कभी व्यक्त हो जायेगा फिर अव्यक्त हो जायेगा। ये आना - जाना निरन्तर चलता रहता है। ब्रह्मा जी जब काम करेंगे अर्थात उनके दिन में व्यक्त होता जायेगा और जब वह निद्रा में चले जायेंगे तो उनकी रात्रि में अव्यक्त होता जायेगा। उदाहरण के लिए यदि हम अपने पुराने आभूषणों को सुनार के पास लेकर जाते हैं नए आभूषण बनवाने के लिए तो सुनार पहले उसे पिघलाता है। इस समय आभूषण अव्यक्त हो जाता है। फिर नया आभूषण बनाता है तो वह पुनः व्यक्त हो जाता है। इस पूरी प्रक्रिया में मूल रूप से सोना विद्यमान रहता है। ये आना - जाना आत्मा का भी निरन्तर चलता रहता है। जब आत्मा शरीर में प्रवेश करती है तो वह व्यक्त हो जाती है और जब शरीर से बाहर जाती है तो अव्यक्त हो जाती है। जैसे समुद्र के पानी में लहरें उठती है, जब वह ऊपर उठती है तो हम उन्हें लहर कहते है पर जब वह पानी में विलीन हो जाती है तो हम उसे समुद्र कहते हैं। समुद्र और लहर एक ही है, अलग अलग नहीं है। जब पानी ऊपर उठता है तो वह लहर के रूप में व्यक्त होता है और जब समुद्र में मिल जाता है तो लहर अव्यक्त हो जाती है। जन्म मृत्यु का ये चरण निरन्तर चलता रहता है।

हम लोग इस छोटे से जीवन को अत्यन्त विशालकाय समझते है। हमारे वैज्ञानिकों ने श्रीहरि कोटा से चंद्रयान तीन को अन्तरिक्ष में भेजा, जाते समय सबने देखा, पर कुछ समय बाद हमें आँखों से दिखाई नहीं दिया क्योंकि हमारी आँखों की क्षमता कम है। इसे हम दूरबीन से देख सकते हैं। ये भी व्यक्त - अव्यक्त का उदहारण है। पास से हमें वस्तु बड़ी दिखाई देती है पर वही वस्तु दूर से देखने पर हमें छोटी दिखाई देती है। पहाड़ की चोटी से नीचे देखने पर वस्तुएँ बिंदु के सदृश नज़र आती हैं, ये बिंदु ही सिंधु में समाता है और फिर इस सिंधु से अनेक नए बिंदु तैयार हो जाते है। ये अविरल आना जाना चलता रहता है। इसकी सापेक्षता को नहीं समझने के कारण मन में अहङ्कार का जन्म होता है। प्रह्लाद के पिता हिरण्याकश्यप को अहङ्कार हो गया था कि मैं ही तीनों लोकों का स्वामी हूँ, सबको मेरी पूजा करनी चाहिये। जिसके कारण उनका सर्वनाश हुआ। रावण के सर्वनाश का कारण भी उसका अहङ्कार था। जब हम इस बात को समझ जाते हैं कि इस प्रकृति में हम बहुत छोटे से हैं, उसी क्षण हमारे अहङ्कार का नाश हो जाता है। पहाड़ों पर मंदिर बनाने का कारण एक ये भी है कि ऊपर से जब हम नीचे देखते हैं तो हमें अपने छोटे से अस्तित्व का भान होता है और हमारा सारा अहङ्कार तिरोहित हो जाता है। अहङ्कारी मनुष्य झुकता नहीं है और जो झुकता नहीं है वह कभी भी भगवान के पास नहीं जा सकता। भगवान के साथ एकरूप होने के लिए झुकना अत्यन्त आवश्यक है और झुकने से ही अहङ्कार का नाश होता है।

कछुआ संकट पड़ने पर अपनी छह इन्द्रियों को अपने अन्दर खींच लेता है, उसी प्रकार मनुष्यों को भी अपनी इन्द्रियों को वश में रखना चाहिये।

8.20

**परस्तस्मात्तु भावोऽन्योऽव्यक्तोऽव्यक्तात्सनातनः ।
यः (स्) स सर्वेषु भूतेषु, नश्यत्सु न विनश्यति ॥ 8.20॥**

परंतु उस अव्यक्त (ब्रह्मा के सूक्ष्म शरीर) से अन्य (विलक्षण) अनादि अत्यंत श्रेष्ठ भाव रूप जो अव्यक्त (ईश्वर) है, वह संपूर्ण प्राणियों के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता।

विवेचन - ब्रह्मा जी के सूक्ष्म शरीर से जो अनादि सर्वश्रेष्ठ भाव रुप जो अव्यक्त है उसका सम्पूर्ण प्राणियों में नष्ट होने पर भी नाश नहीं होता। आत्मा अमर है। आत्मा अनवरत रुप से आती जाती रहती है।

जब हम छोटे से बीज को ज़मीन में डालते हैं तो वह अव्यक्त हो जाता है। बारिश के पानी से वह अङ्कुरित होता है और अपने आपको नष्ट करके, अपने अस्तित्व को मिटाकर, पुष्पित पल्लिवत होता हुआ वृक्ष का रूप धारण कर व्यक्त हो जाता है। इससे अनेक बीज जन्म ले लेते हैं। हमारे वेदो में कहा गया है कि-

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।

पूर्णस्य पूर्णमादाय। पूर्णमेवावशिष्यते॥

एक शून्य से अनेक शून्य उत्पन्न हो जाते है। बीज को हम अव्यक्त कहते हैं, पर उसके अन्दर वृक्ष बनने की चेतना भरी हुई होती है। पञ्च महाभूत जैसे पृथ्वी, जल, आकाश, वायु और अग्नि। ये पाँचो तत्त्व प्रकृति हैं जब भी जीवात्मा आती है तो इनके सानिध्य से व्यक्त हो जाती है। भगवान को भी अपने अंश को प्रकृति के वशीभूत करना पड़ता है। बिना प्रकृति के परमात्मा भी व्यक्त नहीं हो सकते। इसलिए भगवान बारम्बार अवतार लेकर आते हैं। हमारी भारत भूमि चन्दन के समान है, क्योंकि भगवान यहाँ अवतरित होते हैं। हमारे सन्तो ने हमें बताया कि भगवान हैं तो हमें उनकी बात पर विश्वास करना चाहिये। भगवान बाहर कहीं नहीं हैं, वह हमारे अन्दर छोटे से अंश आत्मा के रूप में विद्यमान हैं।

8.21

**अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्त:(स्), तमाहुः(फ्) परमां(ङ्) गतिम् ।
यं(म्) प्राप्य न निवर्तन्ते, तद्धाम परमं(म्) मम ॥ 8.21॥**

उसी को अव्यक्त (और) अक्षर ऐसा कहा गया है (तथा उसी को) परम गति कहा गया है (और) जिसको प्राप्त होने पर (जीव) फिर लौटकर (संसार में) नहीं आते, वह मेरा परमधाम है।

विवेचन- उसी को अव्यक्त अक्षर कहा गया है और उसी को परमगति कहा गया है। जिसको प्राप्त करने पर जीव लौटकर इस पृथ्वी पर नहीं आते, वह स्थान मेरा परमधाम है, मेरा वही घर है। भगवान ने अनेक बार इसकी परिभाषा की, सातवें अध्याय के अट्ठाईसवें, उन्तीसवें और तीसवें श्लोक में। यहाँ माम् शब्द का प्रयोग किया। आठवें अध्याय के तीसरे श्लोक में अक्षरं ब्रह्म कहा, चौथे श्लोक में अधियज्ञ यानि जो अन्दर बैठा है कहा। पाँचवें और छठे श्लोक में माम् शब्द का प्रयोग किया। आठवें श्लोक में परमं पुरुषं दिव्यं की तरफ इंगित किया । नवमें श्लोक में **कविं पुराण मनुशासितारम** कहकर उसकी बात कही। जहाँ पर सूर्य की दृष्टि भी नहीं पहुँच पाती वहाँ पर भी कवि अपनी सूक्ष्म दृष्टि से देख लेता है। तेरहवें, चौदहवें पन्द्रहवें और सोलवें श्लोक में माम् शब्द का प्रयोग किया है। बीसवें श्लोक में अव्यक्ता और सनातन शब्द का प्रयोग किया। इन सबको एक साथ इस श्लोक में फिर से दोहराया है। अक्षर और परमगति प्राप्त होने पर जीव पुनः लौटकर नहीं आते।

8.22

पुरुषः(स्) स परः(फ्) पार्थ, भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया ।
यस्यान्तःस्थानि भूतानि, येन सर्वमिदं(न्) ततम् ॥ 8.22॥

हे पृथानन्दन अर्जुन! संपूर्ण प्राणी जिसके अंतर्गत हैं (और) जिससे यह संपूर्ण संसार व्याप्त है, वह परम पुरुष परमात्मा तो अनन्य भक्ति से प्राप्त होने योग्य हैं।

विवेचन- श्री भगवान कहते हैं- हे पार्थ ! सम्पूर्ण प्राणी जिसके अन्तर्गत हैं और जिससे ये सम्पूर्ण संसार व्याप्त है उस परम पुरुष परमात्मा को अनन्य भक्ति से ही प्राप्त किया जा सकता है। भक्तियोग सबसे सरल माध्यम है ईश्वर प्राप्ति का। सत, रज तम से ऊपर गुणातीत पर पहुँचना पड़ेगा। अपने अन्दर के अहङ्कार को मारकर योग के मार्ग पर चलो। **समत्वं योग उच्यते** अर्थात जहाँ पर सुख दुःख ,मान - अपमान, स्तुति निन्दा ,शीत और गर्मी , सोना और लोहा भी समान हो जायें ,जीव मात्र में समता का भाव आ जाये। बुद्धि से विचारो का और मन से भावों का प्राकट्य होता है। इन्द्रियों से अन्दर का प्रवास गहन आकाश का अनुभव दिलाता है। **ॐ कार का नाद ध्यान कराता है।** प्रत्याहार,धारणा और ध्यान समाधि की और ले जाता है। ये अंतरङ्ग योग भक्तिभङ्गिमा की ओर ले जाता है।

8.23

यत्र काले त्वनावृत्तिम्, आवृत्तिं(ञ्) चैव योगिनः ।
प्रयाता यान्ति तं(ङ्) कालं(म्), वक्ष्यामि भरतर्षभ ॥ 8.23॥

परन्तु, हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन! जिस काल अर्थात् मार्ग में शरीर छोड़कर गए हुए योगी अनावृत्ति को प्राप्त होते हैं अर्थात् पीछे लौट कर नहीं आते और (जिस मार्ग में गए हुए) आवृत्ति को प्राप्त होते हैं अर्थात् पीछे लौट कर आते हैं, उस काल को अर्थात् दोनों मार्गों को मैं कहूँगा।

विवेचन-श्री भगवान कहते है - हे अर्जुन ! जिस काल में अर्थात् मार्ग में शरीर को छोड़कर गए योगी पुनः लौटकर नहीं आयेंगे अव्यक्त हो जायेंगे एवं जिस काल में गये योगी पुनः लौटकर आयेंगे। ऐसे दो मार्गों के बारे में मैं तुम्हे बताता हूँ।

8.24

अग्निर्ज्योतिरहः(श्) शुक्लः(ष्), षण्मासा उत्तरायणम् ।
तत्र प्रयाता गच्छन्ति, ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः ॥ 8.24॥

प्रकाश स्वरूप अग्नि का अधिपति देवता, दिन का अधिपति देवता, शुक्ल पक्ष का अधिपति देवता, और छः महीनों वाले उत्तरायण का अधिपति देवता है,उस मार्ग से (शरीर छोड़कर) गए हुए ब्रह्मवेत्ता पुरुष (पहले ब्रह्मलोक को प्राप्त होकर पीछे ब्रह्मा के साथ) ब्रह्म को प्राप्त हो जाते हैं।

विवेचन- जिस मार्ग में प्रकाश स्वरूप अग्नि का अधिपति देवता, दिन का अधिपति देवता, शुक्ल पक्ष का अधिपति देवता और छह महीनों वाले उत्तरायण का अधिपति देवता है इस मार्ग से संसार को छोड़कर गए हुए पुरुष पहले ब्रह्मलोक फिर ब्रह्मा जी के साथ ब्रह्म को प्राप्त हो जाते हैं। उत्तरायण में ऊर्ध्व गति की प्राप्ति होती है। उत्तरायण संक्रांति के बाद चौदह जनवरी से लगभग चौदह जून तक चलता है, इसके बाद के छह महीने दक्षिणायन। सूर्य भगवान जब उत्तर की दिशा में प्रवास करते है तो उत्तरायण और जब दक्षिण की दिशा में प्रवास करते है तो दक्षिणायन। दक्षिणायन के छह महीनों के अन्दर अगर मृत्यु होती है तो वह योगी अपने शुभ कर्मों का फल भोगकर वापस आकर जन्म लेता है।

8.25

धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः(ष्), षण्मासा दक्षिणायनम् ।

तत्र चान्द्रमसं(ञ्) ज्योति:(र्), योगी प्राप्य निवर्तते ॥ 8.25॥

धूम का अधिपति देवता, रात्रि का अधिपति देवता, कृष्ण पक्ष का अधिपति देवता, और छह महीनों वाले दक्षिणायन का अधिपति देवता है, (शरीर छोड़कर) उस मार्ग से गया हुआ योगी (सकाम मनुष्य) चन्द्रमा की ज्योति को प्राप्त होकर लौट आता है अर्थात जन्म- मरण को प्राप्त होता है।

विवेचन - जिस मार्ग में धूम का अधिपति देवता, रात्रि का अधिपति देवता, कृष्ण पक्ष का अधिपति देवता और छह महीने वाले दक्षिणायन का अधिपति देवता है, जो योगी इस मार्ग से शरीर को छोड़कर जाता है वह चन्द्रमा की ज्योति को प्राप्त करके पुनः इस जन्म-मरण के चक्र में आ जाता है।

8.26

शुक्लकृष्णे गती ह्येते, जगतः(श्) शाश्वते मते ।
एकया यात्यनावृत्तिम्, अन्ययावर्तते पुनः ॥ 8.26॥

क्योंकि शुक्ल और कृष्ण यह दोनों गतियाँ अनादि काल से जगत (प्राणीमात्र) के साथ सम्बन्ध रखने वाली मानी गई है। इनमें से एक गति में जाने वाले को लौटना नहीं पड़ता और दूसरी गति में जाने वाले को पुनः लौटना पड़ता है।

विवेचन - शुक्ल और कृष्ण पक्ष दोनों अनादि काल से जगत के साथ सम्बध रखने वाली गतियाँ मानी गयी हैं। इनमे से एक गति से जाने वाले को लौटना नहीं पड़ता और दूसरी गति से जाने वाले को लौटना पड़ता है।

8.27

नैते सृती पार्थ जानन्, योगी मुह्यति कश्चन ।
तस्मात्सर्वेषु कालेषु, योगयुक्तो भवार्जुन ॥ 8.27॥

हे पृथानन्दन! इन दोनों मार्गों को जानने वाला कोई भी योगी मोहित नहीं होता।अतः हे अर्जुन! तू() सब समय में योगयुक्त, (समता में) स्थित हो जा।

विवेचन - भगवान यहाँ पर तीसरे मार्ग के बारे में बताते है। वह कहते हैं - हे पृथानन्दन इन दोनों मार्गो को जानने वाला कोई भी योगी मोहित नहीं होता है। अर्जुन तुम तीसरे मार्ग से जाओ अर्थात योगयुक्त हो जाओ अर्थात समत्व को प्राप्त करो। समत्व का अर्थ है-

सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।

सुख दुःखको समान समझकर अर्थात् (उनमें) राग द्वेष न करके तथा लाभ हानि को और जय पराजय को समान समझना।

8.28

वेदेषु यज्ञेषु तपः(स्) सु चैव,
दानेषु यत्पुण्यफलं(म्) प्रदिष्टम् ।
अत्येति तत्सर्वमिदं(म्) विदित्वायोगी,
परं(म्) स्थानमुपैति चाद्यम् ॥ 8.28॥

योगी (भक्त) इसको (इस अध्याय में वर्णित विषय को) जानकर वेदों में, यज्ञों में, तपों में तथा दान में जो- जो पुण्यफल कहे गए हैं, उन सभी पुण्यफलों का अतिक्रमण कर जाता है और आदिस्थान परमात्मा को प्राप्त हो जाता है।

विवेचन - योगी पुरुषों ने शुक्ल और कृष्ण पक्ष के दोनों मार्गों को जान लिया है। वेदों में कहा गया है की यज्ञ करके, दान करके जो मिलने वाला है पुण्य फल उससे भी उच्च है योगयुक्त बनना। योग अर्थात अष्टांग योग, भगवान पतञ्जलि ने इसकी बहुत अच्छी व्याख्या की है। जिसने समत्व को प्राप्त कर लिया ऐसा योगी परमधाम को प्राप्त होता है।

इस आसान से योगशास्त्र को समझ कर उसका पालन करके अन्दर से सन्तुष्ट होकर जो समत्व में रहता है उसका जीवन भक्तिमय हो जाता है।

सर्वभूतहिते रताः हर जीव के प्रति दया और करुणा का भाव रखना। किसी के प्रति भी द्वेष की भावना नहीं रखनी चाहिये। ग्यारहवें अध्याय में भगवान मारने के लिये कहते हैं तो कर्त्तव्य की भावना से द्वेष की भावना से नहीं।

हम सब भाग्यशाली हैं कि हम लोगो के मन में भगवद्गीता पढ़ने की समझने की इच्छा जाग्रत हुई। अब हमें अन्दर की प्रवास आरम्भ करना चाहिये। जब हम भगवान के दिखाए मार्ग पर चलते है तो ब्रह्म पद को प्राप्त कर सकते हैं। **अहं ब्रह्मास्मि।**

इसी के साथ इस अध्याय के सुन्दर विवेचन का समापन हुआ।

विचार मन्थन (प्रश्नोत्तर):-

प्रश्नकर्ता - वेद प्रकाश भईया

प्रश्न- द्वैतवाद और अद्वैतवाद को समझाइये।

उत्तर- अद्वैत को साङ्ख्ययोग भी कहा गया है क्योंकि ये एक है। दो यानि द्वैतवाद से एक यानि अद्वैत की और जाकर शून्य हो जाना ये बहुत आसान है। जब मैं और भगवान अलग अलग है। मैं भक्त हूँ मुझमें तुझमें बस भेद यही, मैं नर हूँ तुम नारायण हो ये भेद भक्त को भगवान से अलग रखता है। भगवान को जब हम अपने सखा, मित्र, पति किसी भी रूप में भजते है ध्यान करते है तो ये द्वैत है। द्वैतवाद भक्तिमार्ग पर ले जाता है।

अद्वैत के मार्ग में भक्त और भगवान दो नहीं एक ही होते हैं। **ममै वांशो जीव लोके जीव भूतस सनातनः** मेरे अन्दर उसी परमपिता परमात्मा का अंश है अतः मुझमें और उसमे कोई भेद ही नहीं है। घट के अन्दर और बाहर दोनों तरफ आकाश है घट के फूट जाने पर दोनों एक ही हो जायेंगे। दोनों अलग अलग नहीं हैं, एक ही हैं ये अद्वैतवाद है। भक्ति मार्ग सबसे आसान है अब सौंप दिया इस जीवन का सब भार तुम्हारे हाथो में।

प्रश्नकर्ता - बजरङ्ग भईया

प्रश्न - कार्मिक एकाउंट के कारण मनुष्य ग़रीब और अमीर होता है। कई लोग अमीर होने पर भी दुःखी रहते हैं तो क्या ये भी कार्मिक एकाउंट के कारण होता है?

उत्तर - घर में पैसा जो आता है वह परिवार के किसी भी सदस्य के भाग्य से आ सकता है। ऐसा कोई सदस्य जो कमाने में असमर्थ हो उसके भाग्य से भी घर में धन आता है। मैंने ये कर्म किया है अतः ये मुझे फल मिला है, फल की इच्छा करने से पुनः फलाकाङ्क्षा में फँस जाते हैं। मैंने अपना कर्म किया है अब जो भी फल देना है वह देगा। फल की लालसा नहीं करनी चाहिए।

सुख और दुःख से इस संसार में कोई भी नहीं बचा है ये बाहर की वस्तु है। इसे अपने अन्दर कौन लाता है? भगवान ने इतना सारा हमें प्रदान करा हैं हमें अपना ध्यान वहाँ लगाना चाहिये।

प्रश्नकर्त्ता - जितेंद्र भईया

प्रश्न - जीवन में इतना अभ्यास हो की अन्त समय भी भगवान का ध्यान रहे तो क्या वह दुबारा इस संसार में नहीं आयेगा? मृत्यु का समय तो हमारे वश में नहीं है यदि शुक्ल पक्ष या कृष्ण पक्ष में ईह लीला समाप्त होती है चाहे जीवन भर कुछ भी किया हो तो क्या वह मुक्त हो जाता है।

उत्तर - अन्त समय में जो ध्यान जीवन भर किया उसी के अनुसार हमें दूसरी योनि प्राप्त होती है। जीवन भर यदि आप सन्तुष्ट रहे भगवान को धन्यवाद देते रहे हर चीज़ के लिए, अन्तिम समय भी आपने धन्यवाद दिया अच्छा जीवन देने के लिए और कहा कि अब

मुझे अपने साथ रख लो भगवन। ये तब होगा जब हम देह सुख से बाहर निकलकर आत्मसुख में जाएँगे। परिस्थितियों से आत्मस्थिति ज्यादा महत्त्वपूर्ण होती है। आत्मस्थिति के बदलते ही परिस्थिति भी बदल जाती है। आत्मस्थिति जब ठीक होगी तब अन्त समय में मन विकारों से कामनाओं से मुक्त रहेगा आत्मा से चिपकेगा नहीं तो वह तीसरे मार्ग से जाकर ब्रह्म पद को प्राप्त करेगा।

भगवान ने हमें रास्ते बतायें है किस रास्ते पर चलना है ये स्वयं तय करना है।परम धाम को प्राप्त करने के लिए शुक्ल और कृष्ण पक्ष के अलावा भी बहुत सारी बातें होती हैं। मन की, बुद्धि की स्थिति, अहङ्कार की क्या स्थिति रही ये भी महत्त्वपूर्ण है। पञ्चेन्द्रियाँ तो विलीन हो जाती है पर मन, बुद्धि अहँकार विलीन नहीं होता है। अतः इस पर ध्यान देने की आवश्यकता है। जीवन में युद्ध भी करो पर हमें हमेशा भजते रहना।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सुब्रह्मविद्यायां (म्) योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे अक्षरब्रह्मयोगो नाम अष्टमोऽध्यायः ॥8॥

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में 'अक्षरब्रह्मयोग' नामक आठवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||

||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||